Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

काव्यप्रस्थानवादियों के मत में अलंकार विमर्श : रुद्रट के विशेष सन्दर्भ में

गरिमा यादव
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज,उत्तर प्रदेश,भारत।

Article Info
Volume 3 Issue 3
Page Number : 139-143

Publication Issue :
May-June-2020

Article History
Accepted : 20 June 2020
Published : 30 June 2020

काव्य–सौन्दर्य की परख करने वाले शास्त्र का नाम 'काव्यशास्त्र' है। काव्यशास्त्र के प्रारम्भिक युग में इसके लिए मुख्य रूप से 'काव्यालंकार' शब्द का प्रयोग होता था। भामह का कारिका–रूप में लिखा हुआ काव्यशास्त्र का आदि ग्रन्थ 'काव्यालंकार' नाम से ही प्रसिद्ध है। उद्भट ने भी अपने ग्रन्थ का नाम 'काव्यालंकारसारसंग्रह' रखा है। रुद्रट के काव्यशास्त्र विषयक ग्रन्थ का नाम भी 'काव्यालंकार' है। वामन ने **''सौन्दर्यमलंकारः''**[1] सूत्र लिखकर अलंकार शब्द का सौन्दर्यपरक प्रतिपादन किया है। अन्य सब आचार्यों ने भी काव्य के सौन्दर्याधायक धर्मों को अलंकार नाम से व्यवहृत किया है। **''काव्यशोभाकरान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते''**[2] आदि वचन भी इसी मत की पुष्टि करते हैं।

बाद में इस शास्त्र के लिए 'काव्यालंकार' के बजाय केवल 'अलंकारशास्त्र' नाम का ही प्रयोग पाया जाता है। 'प्रतापरुद्रीय' की टीका में 'अलंकारशास्त्र' नाम के प्रतिपादन के लिए 'छत्रिन्याय' का अवलम्बन किया गया है, यद्यपि **'रसालङ्काराद्यनेकविषयमिदं शास्त्रं तथापि छत्रिन्यायेन अलंकार शास्त्रमुच्यते'**[3]। इसका अर्थ यह हुआ कि यद्यपि इस शास्त्र में रस, गुण, दोष, अलंकार आदि अनेक विषयों का विवेचन किया गया है तथापि छत्रिन्याय से उसे केवल 'अलंकारशास्त्र' कहा जाता है।

ग्यारहवीं शताब्दी में 'सरस्वतीकण्ठाभरण' के रचयिता भोजदेव ने मुख्य रूप से इस शास्त्र के लिए 'काव्यशास्त्र' पद का प्रयोग किया है परन्तु उन्होंने शास्त्र शब्द की विधि निषेधपरक **'शासनात् शास्त्रं'** इस पहली व्युत्पत्ति को लेकर ही शास्त्र शब्द का प्रयोग माना है। उन्होंने लिखा है

''यदविधौ च निषेधे च व्युत्पत्तेरेव कारणं ।
तदध्येयं विदुस्तेन लोकयात्रा प्रवर्तते ।।''[4]

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

अर्थात् विधि या निषेध का ज्ञान कराने वाला या शासन करने वाला 'शास्त्र' है उसका अध्ययन करना चाहिए क्योंकि उसी से लोकव्यवहार का संचालन होता है।

काव्यशास्त्र के लिए (1) काव्यालङ्कार (2) काव्यशास्त्र (3) अलंकारशास्त्र (4) साहित्यशास्त्र (5) क्रियाकल्प, इन पाँच नामों का प्रयोग होता रहा है। भामह, उद्भट, रुद्रट, वामन और कुन्तक ने इनमें 'काव्यालङ्कार' शब्द को अधिक पसन्द किया है इसलिए अपने ग्रन्थों का नाम काव्यालङ्कार रखा है।

संस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में रुद्रट प्रणीत काव्यालङ्कार यद्यपि भरत, भामह, दण्डी, वामन, कुन्तक, आनन्दवर्धन, मम्मट, विश्वनाथ तथा जगन्नाथ के ग्रन्थों के समान अत्यन्त प्रख्यात तो नहीं है तथापि ध्वनिपूर्ववर्ती आचार्यों और ध्वनिप्रर्वतक आनन्दवर्धन के ग्रन्थों के बीच एक अनिवार्य कड़ी के रूप में विद्यमान यह ग्रन्थ अपना विशिष्ट महत्त्व रखता है।

आचार्य रुद्रट का समय वामन के बाद का है। इनका दूसरा नाम शतानन्द था किन्तु वह नाम अधिक प्रसिद्ध नहीं है। इनकी प्रसिद्धि रुद्रट नाम से ही है। इनके पिता का नाम वामुकभट्ट था। इनके नाम से ही प्रतीत होता है कि ये कश्मीरी थे। प्रस्तुत ग्रन्थ के टीकाकार नमिसाधु ने पंचम अध्याय के **'चित्रकाव्य–प्रकरण'** में आचार्य रुद्रट के वंश का परिचय इस प्रकार उल्लिखित किया है

अत्र च चक्रे स्वनामाङ्कभूतोऽयं श्लोकः कविनान्तर्भावितो यथा–

'शतानन्दपराख्येन भट्टवामुकसूनुना।

साधितं रुद्रटेनेदं समाजा धीमतां हितम्।।''[5]

इनके मत का उल्लेख धनिक, मम्मट, प्रतीहारेन्दुराज, राजशेखर आदि अनेक आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में किया है। किन्तु इनमें सबसे पूर्ववर्ती उल्लेख राजशेखर द्वारा किया गया है। राजशेखर ने 'काव्यामीमांसा' में **'काकुवक्रोक्तिर्नाम शब्दालङ्कारोऽयमिति रुद्रटः'[6]** लिखकर रुद्रट के मत का उल्लेख किया है। राजशेखर का काल 920 ई0 के लगभग माना जाता है। इसलिए रुद्रट का काल उनके पूर्व नवम् शताब्दी में 850 ई0 के लगभग पड़ता है।

रुद्रट की मनोवैज्ञानिकता तथा स्पष्टवादिता का परिचय उनके द्वारा निषिद्ध प्रसंगो के सम्बन्ध में दिये गये श्लोक से हो जाता है–

दारिद्रयव्याधिजराशीतोष्णाद्युद्भवानि दुःखानि।

बीभत्सं च विदग्ध्यादन्यत्र न भारताद्वर्षात्।।[7]

वर्षेष्वन्येषु यतो मणिकनकमयी मही हितं सुलभम्।

विगताधित्याधिजराद्वन्द्वा लक्षायुशो लोकाः ।।[8]

इन पद्यों में रुद्रट ने अपने युग के प्रति सजगता तथा भावुकता से दूर हटकर अन्य कवियों के असमान भारत की वास्तविक दशा का वर्णन किया है। इन चारों पद्यों से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे कोई दशम शती का व्यक्ति नहीं अपितु आज का ही व्यक्ति प्राचीन प्रसिद्ध आख्यानों, को केवल कथानक मात्र समझाते हुए उन्हें उसी रूप में वर्णित करने और भारत की अधुनातम अवस्था का चित्रण वास्तविक रूप में ही करने का परामर्श दे रहा हो।

काव्यालङ्कार में 16 अध्याय है जिसमें कुल 734 पद्य हैं। बारहवें अध्याय के 40 वें पद्य के उपरान्त 14 पद्य प्रक्षिप्त माने जाते हैं यदि उनको भी सम्मिलित किया जाए तो यह पद्य–संख्या 748 हो जाती है।[9] इनमें 495 कारिकाएं हैं और शेष 253 उदाहरण हैं।

प्रथम अध्याय में 22 पद्य हैं। इसमें मंगलाचरण में गणेश एवं गौरी के स्तवन के उपरान्त काव्यप्रयोजन और काव्य हेतु का निरूपण किया गया है और कविमहिमा की चर्चा की गई है। द्वितीय अध्याय में काव्यलक्षण, रीतियों तथा शब्दालंकारों का निरूपण किया गया है। तृतीय अध्याय में शब्दालंकारों का निरुपण है तथा चतुर्थ और पंचम अध्याय में भी यमक, श्लेष तथा चित्र नामक शब्दालंकारों का ही निरूपण है।

षष्ठ अध्याय में दोष–प्रकरण निरूपित हुआ है। सप्तम अध्याय में अर्थालंकारों का निरूपण किया गया है तथा अष्टम अध्याय में औपम्यगत और नवम अध्याय में अतिशयगत अलंकारों का निरूपण किया गया है।

दशम अध्याय में अर्थश्लेष के दस भेदों के लक्षणोदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। एकादश अध्याय में 9 अर्थदोषों का निरूपण है, द्वादश से लेकर चतुर्दश अध्यायों में शृंगार रस तथा उसके अन्तर्गत नायक–नायिका–भेद का निरूपण किया गया है।

पंचदश अध्याय में शृंगारेतर नौ रसों का वर्णन है, इनमें शान्त रस के अतिरिक्त प्रेयान् रस भी सम्मिलित है। षोडश अध्याय में विभिन्न काव्यभेदों की चर्चा है और अन्त में भवानी, मुरारि और गणेश का स्तवन किया गया है।

इस प्रकार इस ग्रन्थ में प्रायः सभी प्रचलित काव्यांगों को स्थान मिला है। कलेवर की दृष्टि से ग्रन्थ का बहुभाग अलंकारों को समर्पित हुआ है।

अलंकार प्रकरण–

भामह के 'काव्यालङ्कार' के व्याख्याकारों में भामह–विवरण निर्माता उद्भट, दण्डी तथा रुद्रट का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अलङ्कारसम्प्रदायवादी काव्य में अलंकारों को ही प्रधान मानते हैं और इसका अन्तर्भाव रसवदलंकारो में करते हैं। भामह और दण्डी दोनों ने रसवदलंकारों के भीतर ही रस का अन्तर्भाव किया है–

'रसवद्दर्शितस्पष्टशृङ्गारादिरसं यथा।'[10]–भामह

'मधुरे रसवद्वचि वस्तून्यपि रसस्थितिः।'[11] –दण्डी

रुद्रट का 'काव्यालङ्कार ग्रन्थ आर्या छन्द में लिखा गया है। ग्रन्थ 15 अध्यायों में विभक्त है जिनमें से 11 अध्यायों में अलंकारों का वर्णन है। अलङ्कारों के विवेचन में इनका नवीन दृष्टिकोंण यह है कि, इन्होंने वैज्ञानिक आधार पर अलङ्कारों का विभाजन करने का प्रयत्न किया है। वास्तव, औपम्य, अतिशय तथा श्लेष इन चार को इन्होंने अलङ्कारों का विभाजक तत्व माना है और इसी के आधार पर अलङ्कारों को चार भागों में विभक्त किया है। रुद्रट ने अलङ्कार के क्षेत्र में 1. मत 2. साम्य 3. पिहित और 4. भाव नाम के चार बिल्कुल नवीन अलङ्कारों की कल्पना की है जिनका उल्लेख प्राचीन और नवीन किन्हीं ग्रन्थों में नहीं मिलता है। कुछ प्राचीन अलङ्कारों का इन्होंने नवीन रुप में नामकरण किया है। जैसे भामह आदि के व्याजस्तुति के लिए इन्होंने **'व्याजश्लेष'** शब्द का प्रयोग किया है।[12]

रुद्रट ने प्रस्तुत शब्दालङ्कारों में वक्रोक्ति अलंकार को सर्वप्रथम प्रस्तुत किया है। विशेष बात यह है कि वक्रोक्ति को अलंकार रुप में सर्वप्रथम इन्होंने ही प्रस्तुत किया है। यमक, श्लेष तथा चित्र अलंकारों के भेदोपभेदों का उल्लेख यद्यपि रुद्रट से पूर्व भामह तथा दण्डी द्वारा प्रतिपादित किया जा चुका था, किन्तु रुद्रट ने इनके नवीन उपभेदों का समावेश किया तथा सभी भेदों को पहले की अपेक्षा कहीं अधिक व्यवस्थित, विशद तथा स्पष्ट रुप में प्रस्तुत किया।

प्रतिपादन शैली के अतिरिक्त उदाहरणों की दृष्टि से भी ये प्रसंग सर्वप्रथम स्पष्ट रीति में निरूपित हुए हैं और परवर्ती आचार्यों में भोजराज तथा विश्वनाथ के ग्रन्थों में जो एतद्विषयक स्वच्छता है उसमें रुद्रट का साक्षात् अथवा प्रकारान्तर से योगदान स्वीकार किया जा सकता है।

रुद्रट ने 57 अर्थालंकारों का निरूपण किया है, इनमें से केवल 26 अलंकार भामह, दण्डी आदि द्वारा निरुपित हो चुके थे। शेष 31 अलंकारों की आविष्कृति का श्रेय रुद्रट को है या नहीं? निस्सन्देह इतना विशाल कृतित्व सामान्यतः एक व्यक्ति द्वारा सम्भव नहीं है। सम्भवतः रुद्रट ने काव्यशास्त्रीय विषयों पर विचार विमर्श करने वाले आचार्यवर्ग की विचारधारा से प्रभावित होकर अलंकारों का इस प्रकार वर्गीकरण किया। सभी नवीन अलंकारों को तथा वर्गीकरण को एक ग्रन्थ के माध्यम से सर्वप्रथम काव्यशास्त्रीय जगत के समक्ष प्रस्तुत करने का श्रेय निःसंदेह रुद्रट को ही दिया जा सकता है जो कि अपने आप में एक महत्वपूर्ण स्तुत्य एवं उपादेय प्रयास है तथा काव्यशास्त्र के अध्येता के लिए अनिवार्यतः अध्येतव्य विषय है।

अर्थालङ्कार को चार वर्गों में विभक्त किया गया है–वास्तव, औपम्य, अतिशय और श्लेष। वास्तवमूलक अलंकारों की संख्या 23 और औपम्यमूलक अलंकारों की संख्या 21, अतिशयमूलक अलंकारों की संख्या 12 और श्लेषमूलक अलंकारों की संख्या 1 है।[13] इस प्रकार कुल 57 अर्थालंकारों को इस ग्रन्थ में स्थान मिला है।

इस प्रकार रुद्रट के ग्रन्थ के सम्यक् अध्ययन से यह स्पष्टतः लक्षित होता है कि वे अपने से पूर्ववर्ती किसी भी प्रख्यात काव्याचार्य अर्थात् आचार्य भरत, भामह, दण्डी तथा उद्भट्ट से प्रभावित नहीं थे।

इनके ग्रन्थ के अवलोकन से कुछ इस प्रकार के आभास मिल जाते हैं कि अब अलंकारवादी एवं रीतिवादी सिद्धान्त परम्परा समाप्त हो चुकी है तथा किसी ऐसे सिद्धान्त का प्रतिस्फुटन होने जा रहा है जो काव्य का बाह्यपरक तत्व न होकर आन्तरिक तत्व है–हमारा संकेत ध्वनि–सिद्धान्त की ओर है। इस दृष्टि से रुद्रट एक ओर अलंकारवादी तथा रीतिवादी आचार्य और दूसरी ओर ध्वनिवादी आचार्य आनन्दवर्धन के बीच एक श्रृंखला का कार्य करते हैं।

निष्कर्षतः रुद्रट ध्वनिपूर्ववर्ती आचार्यों तथा ध्वनिवादी आचार्य आनन्दवर्धन एवं उनके अनुयायियों के बीच एक अनिवार्य कड़ी के रूप में विद्यमान एक सफल संग्रहकर्ता आचार्य हैं।

संदर्भ–सूची

1. काव्यालङ्कारसूत्र– 1–2
2. काव्यादर्श– 2–1
3. प्रतापरुद्रीय टीका– पृ0 3
4. सरस्वीकण्ठाभरण– 2–138

5. काव्यालङ्कार, रुद्रटकृत, पंचम अध्याय– 12–14 की टीका
6. काव्यमीमांसा, सप्तम अध्याय–पृ0 31
7. काव्यालङ्कार, रुद्रटकृत– 1/1
8. काव्यालङ्कार ग्रन्थ समाप्ति सूचक टिप्पणी
9. काव्यालङ्कार, रुद्रटकृत– सप्तम अध्याय
10 काव्यालङ्कार, भामहकृत– 3–6
11. काव्यादर्श, दण्डीकृत– 3–51
12. काव्यालङ्कार भामहकृत– 10–11
13. काव्यालङ्कार रुद्रटकृत– सप्तम अध्याय